ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 13 अंक 1 जनवरी-फरवरी 2021

दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की मानक शोध पत्रिका

India's Leading Referred Hindi Language Journal

IMPACT FACTOR : 5.051

भारत में संसदीय गरिमा का अवमूल्यन–महेश कुमार 1256
प्रधानमंत्री मोदी के तहत भारतीय विदेश नीति: निरंतरता और परिवर्तन–डॉ० जय कुमार झा 1259
मानव जीवन में भावनात्मक और संवेगात्मक मनोविज्ञान से जुड़े तथ्यों एवं सिद्धांतो की महत्ता: समीक्षा
–डॉ० जया भारती; डॉ० संदीप कुमार वर्मा 1262
भारत में जल संसाधन एवं जल संरक्षण की परम्परागत विधियों का शोधपरक अध्ययन–कविता 1266
मानवाधिकार : साहित्य की समग्र दृष्टि–डॉ० रूपेश कुमार चौहान 1271
निर्धनता उन्मूलन में मनरेगा कार्यक्रम की भूमिका : अनुसूचित जातियों के विशेष सन्दर्भ में–डॉ० प्रियंका एन० रूवाली; उपमा द्विवेदी 1275
''उच्च शिक्षा स्तर पर महाविद्यालयी शिक्षा में ई-लर्निंग की प्रभावशीलता का अध्ययन''–प्रीति शर्मा; डॉ० मंजू शर्मा 1279
युवा एवं पंचायती राज संस्थाओं का शिक्षा और महिलाओं के सामाजिक विकास में भूमिका–श्वेता पांडेय; डॉ० मंजू शर्मा 1283
भारतीय राष्ट्रीय जागरण में स्वामी दयानन्द का योगदान–विकास 1287
आजादी के बाद के भारत में महिलाओं की स्थिति–डॉ० अनिल कुमार तेवतिया 1290
टेलीविजन संस्कृति और सामाजिक प्रतिबद्धता के अंतर्विरोध–डॉ० मधु लोमेश 1295
प्रगतिशील समाज में अवरोधित महिला शिक्षा–प्रो० (डॉ०) मंजू शर्मा; रुकमणी हसवाल 1298
विवेकी राय कृत उपन्यास शवेत-पत्र: एक ऐतिहासिक दस्तावेज–विभा रीन 1303
हिन्दी गद्य साहित्य में महिला लेखन का महत्त्व–प्रो० (डॉ०) शिव शंकर मंडल 1306
सुशासन की अवधारणा एवं व्यवहार : भारतीय शासन व्यवस्था के विशेष संदर्भ में–डॉ० सत्येन्द्र कुमार 1309
ग्रामीण सामाजिक परिवर्तन एवं विकास में पंचायतराज की भूमिका–डॉ० जयराम बैरवा 1312
प्राचीन भारतीय समाज में शिक्षा का महत्व–डॉ० विनय कुमार मिश्र 1317
अनामिका के उपन्यासों में स्त्री-जीवन की अभिव्यक्ति–स्वर्णिम शिप्रा 1322
पूर्वमध्यकाल में जातीय प्रगुणन–प्रवीण पाण्डेय 1326
पश्चिमी राजस्थान की हस्तशिल्प कला का संग्रहालयों में योगदान–अजीत राम चौधारी; डॉ० महेन्द्र चौधरी 1329
भारत में सामाजिक न्याय के निर्वचनकर्ता के रूप में मानव जीवन के विकासात्मक पहलुओं पर सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका
–असीम कुमार शर्मा 1332
भारतीय साहित्य की एकता में बाधक तत्व–डॉ० नवनाथ सर्जेराव शिंदे 1336
पं. दीनदयाल उपाध्याय का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद–डॉ० हरबंस सिंह 1339
क्षेत्रीय विकास, सतत विकास एवं राजनीति - उत्तराखण्ड के लोगो के जनजीवन के विशेष संदर्भ में–सुनील सिंह 1341
किशोर छात्र-छात्राओं की चिंता का उनके कॅरियर के प्रति निर्णय क्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन
–महेन्द्र कुमार; डॉ० जीतेन्द्र प्रताप 1346
पर्यावरण का सामाजिक पक्ष और केदारनाथ सिंह की कविताएं–डॉ० पूर्णिमा आर 1352
सतनामी संप्रदाय और बाबा जगजीवन दास–डॉ० अनिता सिंह 1356
ऑनलाइन एवं ऑफलाइन खरीददारी में उपभोक्ता संतुष्टि के मध्य तुलनात्मक अध्ययन
(बिलासपुर शहर के उपभोक्ताओं के विशेष संदर्भ में)–डॉ० अनामिका तिवारी; अंकिता पाण्डेय 1360
समकालीन विमर्शों के समक्ष चुनौतियाँ–संजय सिंह यादव; डॉ० विनोद कुमार 1374
स्वामी सुन्दरानन्द जी : निम के प्रथम विद्यार्थी–गीता आर्या 1377
दार्शनिक चिन्तन की प्रक्रिया – मूल्यान्वेषण या सत्यान्वेषण–डॉ० रेखा ओझा 1381
इच्छाशक्ति और संघर्ष की दास्तान ('मुर्दहिया' के संदर्भ में)–डॉ० विलास अंबादास सालुंके 1386
हिंदी उपन्यासों में चित्रित किन्नर विमर्श–डॉ० दायक राम 1388
भारत में मातृभाषा का महत्व एवं चुनौती : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन–डॉ० सोनू कुमार 1392
भारत में किसानों का दशा एवं दिशा : एक अध्ययन–डॉ० राकेश रंजन 1396
छत्तीसगढ़, पर्यटन और नक्सलवाद–डॉ० काजल मोइत्रा; डॉ० रत्नेश कुमार खन्ना; रेखा शुक्ला 1401
दलित महिलाओं के शोषण के विभिन्न आयाम : एक ऐतिहासिक अध्ययन–कुमारी संगीता कुशवाहा 1405
भारत में महिलाओं को प्रदत्त संवैधानिक अधिकार (सैद्धांतिक व व्यावहारिक विश्लेषण)–आशा नागर 1408

मानवाधिकार : साहित्य की समग्र दृष्टि

डॉ० रूपेश कुमार चौहान

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, किरोड़ीमल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

मानव सभ्यता का इतिहास काफी प्राचीन रहा है। वस्तुतः जब से मानव का ज्ञान से जुड़ाव हुआ होगा तब से ही वह समाज और उससे जुड़े हुए अधिकार और कर्त्तव्यों को जान पाया होगा। मानव भूगोल और भू-गर्भशास्त्र के अध्ययनोपरान्त ज्ञानी मानव होमोसैपियन्स सैपियन्स की स्थिति आज से लगभग 50,000 वर्ष पूर्व मानी जाती है। अतः यह मानना समीचीन है कि मानव अधिकार का सम्बन्ध मानव जाति की ज्ञान परम्परा से है क्योंकि जब ज्ञानी मानव का उदय हुआ होगा तब से ही व्यक्ति के अधिकार की गरिमा को मानना उचित प्रतीत होता है। भारतीय प्राचीन साहित्य मनुष्य को समाज का मौलिक तत्त्व मानता है किंतु चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में यूनान के दार्शनिक अरस्तू ने मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी माना था। आजतक इसी परिभाषा को रूढ़ि प्रदान कर दी गई। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। हमारा ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व के आदिग्रंथ ऋग्वेद में नैतिकता व मूल्यों की पराकाष्ठा है। ऐसे में अरस्तू की ग्रीक सभ्यता से हजारों वर्ष पूर्व हमने मानव मूल्यों की प्रत्येक स्थिति को आत्मसात् कर लिया था। समाज में व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास का आधार व्यक्तिगत अधिकार अर्थात् मानव अधिकार ही हैं। इन मानव अधिकार की चर्चा-परिचर्चा के दौरान ऐसा मानना ज्यादा सत्य प्रतीत होता है कि अधिकार से ज्यादा व्यक्ति की नैतिकता महत्वपूर्ण है। संस्कृत के विभिन्न धर्मग्रंथ नैतिक मूल्यों की समाज के लिए महत्वपूर्ण कर्तव्यभावना प्रस्तुत करते हैं। मानव अधिकार की आधुनिक रूप में विभिन्न परिभाषाएं मिलती हैं जिनमें इस परिभाषा में सम्पूर्ण परिभाषाओं का सम्मिलन उचित ही है। कहा है–**"अधिकार एक ऐसी व्यवस्था है जिसके बिना सामान्यतः कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता।"**[1]

इस आधुनिक परिभाषा से हजारों वर्ष पूर्व हमारे सम्पूर्ण साहित्यिक वाङ्मय में सभी के सुख की महान् कल्पना की गई है–

'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।[2]

इसी तरह समस्त धरती को अपना परिवार मानना सिर्फ इसी संस्कृति की धरोहर हो सकती है–

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।[3]

स्वयं भगवन् वेदव्यास जी ने पाप और पुण्य की व्याख्या भी प्राणिमात्र के कल्याण से की है अर्थात् प्राणी को दुःख पहुँचाना पाप और दूसरे का उपकार पुण्य माना है।

'अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्।।[4]

यह ईश (ब्रह्म) ही समस्त जगत् में समाया है अतः प्रत्येक व्यक्ति से प्रेम कर त्यागभाव से भोग करने योग्य है।

'ॐ ईशावास्यामिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्य स्विद् धनम्।।[5]

इसी को आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि जो अपने आप में सभी प्राणियों को देखता है वह रागद्वेष से विमुक्त होता है।

'यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मनेवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजिगुप्सते।।[6]

इन सभी वचनों से पूर्व अति प्राचीनकाल में ही सभी के साथ-साथ रहने और साथ-साथ सब क्रियाएं करने की कल्पना भी की गई है।

'संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जनानाम् उपासते।।[7]

और आगे भी कहा है कि सबका चित्त एक समान भाव से भरा हो तथा सब एक विचार होकर किसी भी कार्य में लगें अर्थात्

'समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।[8]

इसी भावना को किसी शायर ने सही कहा है कि चमन की शोभा फूलों के विविध रंगों और खुशबू के मेल-जोल से बढ़ती है।